IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भोगभूमि का युगांत जैन दर्शन में कर्मभूमि का उदय

अक्षिता जैन

शोधार्थी (इतिहास)

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा राजस्थान

Keywords

काल चक्र, भोगभूमि, कर्मभूमि कल्प वृक्ष , कुलकर, ऋषभ देव

शोध-सार

प्रस्तुत शोध पत्र जैन कालचक्र एवं युग परिवर्तन की अवधारणा पर केन्द्रित है। शोध पत्र का प्रमुख उद्देश्य जैन आगमानुसार भोगवाद से कर्मवाद की ओर प्रवृत होने के स्वाभाविक व भौतिक तत्वों का सूक्ष्म विवेचन है ! जैन धर्म में कालचक्र क्रमशः कृष्ण व शुक्ल पक्ष के समान निरंतर उत्सर्पिणी , अवसर्पिणी रूप में परिवर्तनशील है , जो उन्नति तथा अवनति को दर्शाता है । जैनआगम ग्रंथों में प्रत्येक काल को 6-6 खंडों में वर्गीकृत किया गया है जो भरत एवं ऐरावत क्षेत्रों में अनंतानंत पुनरावृत्त होते हैं । आरंभिक 3 चरण भोग भूमि , जबकि अंतिम 3 चरण कर्म भूमि के रूप में वर्णित हैं । भोग भूमिज मनुष्यों को मनोवांछित समस्त वस्तुएं विविध प्रकार के कल्पवृक्षों के माध्यम से प्राप्त होती थी , कालांतर में कल्पवृक्षों की फलदान सामर्थ्य क्षीण होने पर युगांतरकारी परिवर्तन हुए। भोग भूमिज प्रजा कर्म पथ की और अग्रसर हुई , त्रिलोकसार ग्रन्थ में उल्लेखित विभिन्न कुलकरो द्वारा प्रजा को विभिन्न कौशलों का ज्ञान प्रदान किया गया एवं प्रकृति में हो रहे परिवर्तनों से अवगत कराया । अंतिम कुलकर नाभि राय के पुत्र जैन धर्म प्रवर्तक प्रथम तीर्थंकर ऋषभ देव ने व्याकुल प्रजा को षट्कर्मों एवं 72 कलाओं का ज्ञान प्रदान कर कर्म संबल प्रदान किया । निष्कर्म विलासिता से कर्मनिष्ठ जीवन का संक्रमण मानव जीवन के स्वाभाविक क्रमिक विकास को निर्दिष्ट करता है । शोधपत्र में काल के परिवर्तित परिवेश को प्रस्तुत किया है जो जैन दर्शनानुसार मानव जीवन के विकास क्रम की गहन समझ विकसित करने में सहायक है | जैन धर्माचार्यों के मतानुसार जैन धर्म और दर्शन अनादि निधन है। जैन परम्परा के अनुसार कालचक्र उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी के रूप में क्रमशः निरन्तर परिवर्तन करता है। उत्सर्पिणी काल उत्थान का काल है, इस काल में विकास देखा जाता है तथा अवसर्पिणी काल ह्रास का काल है, इसमें निरन्तर गिरावट देखी जाती है।

अर्द्ध मागधी भाषा के ग्रंथ –

तिलोयपण्णति,सर्वार्थसिद्धि, त्रिलोकसार में प्रत्येक काल के रूप को छह भागों में विभाजित किया गया है जिन्हें आरा कहते हैं।

	अवसर्पिणी काल	**उत्सर्पिणी काल**
प्रथम आरा	सुषमा - सुषमा	दुषमा - दुषमा
द्वितीय आरा	सुषमा	दुषमा
तृतीय आरा	सुषमा - दुषमा	दुषमा - सुषमा
चतुर्थ आरा	दुषमा - सुषमा	सुषमा - दुषमा
पंचम आरा	दुषमा	सुषमा
षष्ठम आरा	दुषमा - दुषमा	सुषमा - सुषमा

उत्सर्पिणी काल का विभाजन अवसर्पिणी कालचक्र के व्युत्क्रमानुपाती है।

कृष्ण पक्ष तथा शुक्ल पक्ष के समान कालचक्र परिवर्तन का उल्लेख रविषेणाचार्य द्वारा पद्मपुराण में किया गया है।

तिलोयपण्णती में भरत और ऐरावत क्षेत्रों में रहट - घटिका न्याय की तरह अनन्तानन्त उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी होने का उल्लेख है।

हिंदू शास्त्रों में भी काल के चक्रीय स्वरूप की अवधारणा को स्वीकार किया गया है। श्री विष्णु पुराण , श्रीमद भागवत पुराण में युगों की अवधारणा का विस्तृत उल्लेख निहित है। कालचक्र को प्राय चार युगों में वर्गीकृत किया गया है :- 1. सतयुग 2. त्रेतायुग 3. द्वापरयुग 4. कलयुग

अवसर्पिणी काल के समकक्ष सतयुग से कलयुग के दौरान निरंतर काल की अवधि , मनुष्यों की आयु तथा ऊंचाई , धर्म एवं नैतिकता में गिरावट आती है। स्कंद पुराण के अनुसार कलयुग के अंत में भगवान विष्णु कल्कि रूप में अवतरित होंगे और अनैतिकता एवं दुराचार का विनाश कर धर्म को पुनर्स्थापित करेंगे जिससे पुनः सतयुग का आरंभ होगा

वर्तमान युग को जैन परम्परा में कालचक्र के अवसर्पिणी रूप का पंचम आरा माना गया है,
भरत व ऐरावत क्षेत्रों में अवसर्पिणी के प्रथम तीन आरो को भोगभूमि तथा अन्तिम तीन आरो को कर्मभूमि के रूप में वर्णित किया गया है।

भोगभूमि का आशय :-

जहां भोगों की प्रधानता रहती है तथा सभी बाह्य सामग्री विविध प्रकार के कल्पवृक्षों से प्राप्त होती थी।

कल्पवृक्षों का स्वरूप :-

भोगभूमि में उत्पन्न हुए जीवों को मनवांछित पदार्थ कल्पवृक्ष से प्राप्त हो जाते थे । पुण्यात्मा जीवों को मनचाहे भोग देने में समर्थ होने से ही विद्वानों ने इसको कल्पवृक्ष संज्ञा प्रदान की है,

कल्पवृक्ष न वनस्पतिकायिक होते थे और न देवों द्वारा अधिष्ठित वृक्ष,ये वृक्षाकार रूप में पृथ्वी के सार स्वरूप सामान्य वृक्षों की भाँति पृथ्वीकायिक होते थे और जीवों को उसके पुण्य के अनुसार इष्ट फल प्रदान करते थे।

इनके माध्यम से भोगभूमि के जीव निरन्तर इन्द्रिय जनित उत्तम सुखों को भोगते थे और अत्यंत संतोषपूर्वक अपना जीवन यापन करते थे, किन्तु तृप्त नहीं होते।

तिलोयपण्णती में विभिन्न प्रजाति के 10 प्रकार के कल्पवृक्षों का उल्लेख किया गया है -

कल्पवृक्ष	प्राप्त सामग्री
पानांग	छह रसो से युक्त पेय पदार्थ ।
तूर्यांग	वाद्ययंत्र
भूषणांग	अलंकार (आभूषण)
वस्त्रांग	वस्त्र सूती व रेशमी
भोजनांग	विभिन्न प्रकार के स्वादयुक्त व्यंजन
गृहांग	रत्नमय व सुवर्णमय भवन
दीपांग	दीपक
पात्रांग	विविध प्रकार के पात्र
पुष्पांग	पुष्प मालाएं
ज्योतिरंग	चन्द्रादित्य क्रांति के सदृश प्रकाश

भरत एवं ऐरावत क्षेत्र में अवसर्पिणी काल के प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय काल में जीवों को प्राप्त सभी अनुकूलताएँ इन कल्पवृक्षों के द्वारा ही प्राप्त होती थी।

हिंदू पौराणिक कथाओं में भी कल्पवृक्ष का उल्लेख किया गया है। श्री विष्णु पुराण , श्रीमद भागवत पुराण तथा मत्स्य पुराण के वर्णनानुसार समुद्र मंथन से प्रकट 14 रत्नों में से एक रत्न कल्पवृक्ष था जिसे समस्त इच्छाओं की पूर्ति करने वाला दिव्य वृक्ष कहा गया है । इंद्र द्वारा इस वृक्ष को स्वर्ग में स्थापित किया गया था । हिंदू पुराणों में कल्पवृक्ष को कल्पतरु अथवा पारिजात की संज्ञा भी दी गई है |

सामान्य रूप में तीनों भोग भूमियाँ

1. उत्तम भोगभूमि 2. मध्यम भोगभूमि 3. जघन्य भोगभूमि

में भोगसामग्री की बाहुल्यता होती थी, भोगों की ही प्रधानता रहती थी।

भोग भूमिज मनुष्य प्रायः निष्कर्म रहकर सांसारिक भोगों से लिप्त जीवन व्यतीत करते थे।

भोगभूमि के जीव मंद कषायी होते थे इसलिए उन्हें आर्य कहा गया। भोगभूमि में युगलिया जीव उत्पन्न होते थे जिनका जन्म होते ही माता - पिता की मृत्यु हो जाती थी।

तृतीय काल (जघन्य भोगभूमि अथवा सुषमा- दुषमा) के अन्तिम वर्षों में धीरे-धीरे कल्पवृक्षों की फलदान सामर्थ्य क्षीण होने लगती है। तृतीय काल के समापन एवं चतुर्थ काल के प्रारंभ में युग परिवर्तन कर भोगभूमि से कर्मभूमि का प्रारंभ होता है। तेजांग कल्पवृक्षों के प्रकाश के मन्द होने से सूर्य -चन्द्र आदि ग्रहों का प्रकाश भोग भूमिज प्रजा के भय का कारण बना,जिसका समुचित निराकरण कुलकरो के माध्यम से किया गया।

कुलकर

स्थानांग सूत्र की वृत्ति में आचार्य अभयदेव ने उल्लेख किया है कि कुल की व्यवस्था का संचालन करने वाला प्रकृष्ट प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति कुलकर कहलाता था।

त्रिलोकसार ग्रन्थ में 14 कुलकर, जबकि लोकविभाग ग्रन्थ में 16 कुलकरों का वर्णन है।

ये सभी कुलकर जगत के प्राणियों को अग्नि को उत्पन्न करना, भोजन पकाकर खाना, विवाह करना, बन्धु परिवार आदि के साथ शिष्टाचार पूर्वक रहना आदि बातों को शिक्षक की भाँति समझाते थे।

त्रिलोकसार में वर्णित 14 कुलकर

1. प्रतिश्रुति कुलकर ने तेजांग कल्पवृक्ष का प्रकाश मंद होने पर चन्द्र तथा सूर्य का परिचय दिया |
2. सन्मति कुलकर ने अन्धकार , तारा पंक्तियों तथा नक्षत्र का परिचय कराया |
3. क्षेमंकर कुलकर ने काल के विकार के कारण क्रूर तिर्यंचो पर कदापि विश्वास नहीं करने का उपदेश दिया |
4. क्षेमंधर कुलकर ने क्रूर तिर्यंचो से सुरक्षा के उपाय बताए |
5. सीमंकर कुलकर ने कल्पवृक्षों की शक्ति क्षीण होने पर सीमाओं का निर्धारण कर पारस्परिक संघर्ष को रोका |
6. सीमंधर कुलकर ने कल्पवृक्षों को चिन्हित कर स्वामित्व का विभाजन किया
7. विमलवाहन कुलकर ने सुगम गमनागमन हेतु हाथी , घोड़े आदि की सवारी एवं वाहनों के प्रयोग का उपदेश दिया |
8. चक्षुष्मान कुलकर ने भोगभूमिज मनुष्य संतान की उत्पत्ति पर मृत्यु को प्राप्त होते थे परन्तु अब संतान का मुख देखने से उत्पन्न भय को संतान का परिचय देकर दूर किया |
9. यशस्वी कुलकर ने भोगभूमिज मनुष्यों को संतान के नामकरण की शिक्षा प्रदान की |
10. अभिचंद्र कुलकर ने मनुष्यों को शिशुओ का रुदन रोकने ,बोलना व चलना सिखाने की शिक्षा प्रदान की|
11. चंद्राभ कुलकर ने सूर्य की किरणों से शीत निवारण की शिक्षा तथा कर्मभूमि की निकटता का ज्ञान

प्रदान किया |

12. मरूदेव कुलकर ने नौका ,छाता आदि के प्रयोग का उपदेश तथा पर्वत पर सीढियां बनाने की शिक्षा दी|
13. प्रसेनजित् कुलकर ने वर्तिपटल (जरायु) दूर करने का उपदेश दिया |
14. नाभिराय कुलकर ने नाभिनाल के काटने का उपदेश एवं आजीविका के उपाय का उपदेश , औषधियों व धान्य आदि की पहिचान तथा उनके प्रयोग की शिक्षा प्रदान की |

त्रिलोकसार एवं जम्बूद्वीप पज्ञसिसूत्र में नाभिराय के पुत्र ऋषभदेव को पन्द्रहवाँ कुलकर बताया है। लोगविभाग एवं आदिपुराण में नाभिराय के पुत्र ऋषभदेव एवं उनके पुत्र भरत को भी पन्द्रहवें एवं सोलहवें कुलकर के रूप में स्वीकार किया है, इन सभी कुलकरों के लिये आदिपुराण में मनु शब्द का प्रयोग भी किया गया है।

ऋषभदेव

ऋषभदेव का जन्म अयोध्या नगरी में वहा के राजा चौदहवे कुलकर नाभिराय की रानी मरुदेवी के गर्भ से हुआ था | जैन रामायण के अनुसार वह प्रभु श्री राम के पूर्वज थे | वे जन्म से ही विलक्षण प्रतिभा के धनी इक्ष्वाकुवंशी राजकुमार थे । नाभिराय के बाद वे राजगद्दी पर बैठे। उन्होंने अपने राज्यकाल में अनेक जनकल्याणकारी कार्यों के साथ-साथ प्रजा को असि, मसि, कृषि, विद्या, वाणिज्य और शिल्प इन षट्कर्मों से आजीविका उपार्जन करना सिखाया | जैन मान्यतानुसार विवाह नाम की पवित्र पद्दति का शुभारम्भ राजा ऋषभदेव द्वारा ही किया गया था |

ऋषभ देव के पुत्र भरत तथा बाहुबली थे | उन्होंने भरत को पुरुष सम्बंधित 72 कलाओं का ज्ञान प्रदान किया , भरत चक्रवर्ती के नाम पर इस देश का नाम भारत पड़ा | बाहुबली कामदेव थे ,जिन्हें ऋषभदेव ने प्राणी लक्षण का ज्ञान प्रदान किया , ऋषभदेव ने पुत्री ब्राह्मी को अक्षर ज्ञान प्रदान किया | ब्राह्मी ने भरतक्षेत्र के आर्य खण्ड की प्रजा को भाषा से अवगत कराया , जिससे कालांतर में ब्राह्मी लिपि का विकास हुआ | "द्राविड़ भाषाओं की सभी लिपियाँ ब्राह्मी लिपि से निकली है |" उत्तर भारत में ब्राह्मी लिपि से गुप्त लिपि विकसित हुई । गुप्तलिपि से नागरी लिपि अथवा देवनागरी लिपि का विकास हुआ । वर्तमान में अधिकांश भाषाओं - हिंदी , संस्कृत , मराठी , नेपाली , सिंधी , कश्मीरी , डोंगरी , मैथिली , संताली , राजस्थानी इत्यादि का लेखन देवनागरी लिपि में ही होता है | आरंभिक अभिलेख ब्राह्मी लिपि में प्राप्त हुए है | ऋषभदेव ने दूसरी पुत्री सुंदरी को अंक विद्या का ज्ञान प्रदान किया जिससे कालांतर में अंकगणित , व्यवसाय , बहीखाता , ज्योतिषविज्ञान का विकास हुआ तथा स्त्रियों को सभ्य जीवन शैली की 64 कलाओं की शिक्षा प्रदान की |

आदि पुराण के अनुसार राजा ऋषभदेव ने तत्कालीन समाज को कर्म के आधार पर तीन वर्गों में विभाजित किया ,कृषि तथा मसि में निपुण वर्ग वैश्य , अस्त्रशस्त्र में पारंगत समाज की सुरक्षा में संलग्न वर्ग क्षत्रिय तथा सेवा कार्यों में संलग्न वर्ग शूद्र कहलाया , जिससे वर्णाश्रम व्यवस्था का उद्भव हुआ यद्यपि इस समय में ब्राह्मण वर्ग का प्रादुर्भाव नहीं हुआ था , जैन दर्शनानुसार ब्राह्मण वर्ण की स्थापना सम्राट भरत चक्रवर्ती द्वारा की गई थी । किंचित परिवर्तन से वर्णाश्रम व्यवस्था का उल्लेख हिंदू दर्शन के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद के दसवें मंडल के पुरुष सूक्त में किया गया है

राजा ऋषभदेव द्वारा प्रदत शिक्षाओं ने मानव जीवन के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया । कालांतर में भी ये शिक्षाएं प्रासंगिक बनी रही जिनके माध्यम से मानव जीवन में सुगमता आई तथा समाज की उन्नति हुई |

उन्होंने असि की शिक्षा के माध्यम से भोगभूमिज प्रजा को आत्मरक्षा हेतु शस्त्रों का प्रयोग करना सिखाया जिससे कालांतर में सैन्य बलों के गठन का मार्ग प्रशस्त हुआ ।

हिंदू शास्त्रों में भी शांति स्थापित करने के सभी उपाय विफल होने पर , अंतिम उपाय के रूप में सशस्त्र संघर्ष का उल्लेख है । महाकाव्य महाभारत में कुरुक्षेत्र में कौरवों तथा पांडवों के मध्य हुआ संघर्ष, धर्मयुद्ध का उदाहरण है |

कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में राज्य के सप्तांग सिद्धांत में भी राज्य की सुरक्षा हेतु सैन्य व्यवस्था का उल्लेख राज्य के अनिवार्य अंग के रूप में किया है । वर्तमान में भी संपूर्ण विश्व में पारस्परिक शांति तथा राष्ट्र की गरिमा बनाए रखने के लिए असि का प्रयोग करते हैं

मसि के ज्ञान से भोगभूमिज मनुष्य ने लेखन कला को सीखा जिससे कालांतर में विभिन्न विद्वानों द्वारा पुरातन ज्ञान को संरक्षित रखने के लिए लिपिबद्ध किया गया जिसके फलस्वरूप गद्य तथा पद्य में अनेक रचनाएं हुई |

राजा ऋषभदेव को कृषि का जनक माना जाता है I उन्होंने कल्पवृक्ष की फलदान सामर्थ्य क्षीण होने पर भूख से व्याकुल प्रजा को उन्नत बीजों , उपजाऊ भूमि , मौसमानुकूल फसलों की बुआई , जुताई के लिए बैलों का प्रयोग ,सिंचाई की विभिन्न विधियां , फसलों की देखरेख तथा कटाई का ज्ञान प्रदान कर भोजन उत्पादन करना सिखाया परिणामस्वरूप मानव जाति ने कल्पवृक्ष पर निर्भरता समाप्त कर कर्मनिष्ठ हो कर खेती करना प्रारंभ किया जिससे मानव जीवन में स्थायित्व आया और समाजीकरण होने लगा I कृषि तथा पशुपालन आजीविका के प्रमुख स्रोत के रूप में अस्तित्व में आए |

कालांतर में कृषि तकनीक उन्नत होने से - लोहे के हल का प्रयोग किया जाने लगा , सिंचाई के लिए नहरों के निर्माण से वर्ष पर्यन्त खेती करना संभव हुआ I वर्तमान में भारत देश की आबादी का अधिकांश हिस्सा कृषि पर निर्भर होने से भारत एक कृषि प्रधान देश है , जिसकी वैश्विक अनाज उत्पादक के रूप में 11.6% हिस्सेदारी है I भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान है 2011 की जनगणना के अनुसार कुल कार्यशील व्यक्तियों का 54.6% हिस्सा कृषि श्रमिकों का है |

ऋषभदेव ने केवल आध्यात्मिक ज्ञान ही नहीं दिया अपितु मानव जीवन के लिए आवश्यक विभिन्न प्रकार की विधाओं का भी प्रचार किया I उनकी शिक्षाओं ने वर्तमान शिक्षा को भी प्रभावित किया है , उन्होंने अहिंसा सत्य तथा संयम पर बल दिया जिससे मानव का आध्यात्मिक तथा नैतिक उत्थान होने के साथ साथ बौद्धिक विकास भी हुआ है I वर्तमान शिक्षा प्रणाली में छात्रों को नैतिक मूल्यों , सत्यनिष्ठा , शांतिपूर्ण सहअस्तित्व , आत्मनियंत्रण तथा पारस्परिक सद्भाव के मूल्यों की शिक्षा दी जाती है I उन्होंने प्रकृति सद्भाव का उपदेश दिया जो पर्यावरण अनुकूल जीवन शैली को प्रोत्साहित करता है , वर्तमान में पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रकृति के प्रति सद्भाव का अनुपालन आवश्यक है |

उनके द्वारा प्रजा को विभिन्न शिल्पों का ज्ञान प्रदान किया गया , जिससे रचनात्मक अभिव्यक्ति में वृद्धि हुई I वास्तुकला , मूर्तिकला , चित्रकला आदि के माध्यम से सांस्कृतिक धरोहरों को संरक्षित किया जाने लगा जो कालांतर में शिल्पकारों की कलात्मक प्रेरणा का प्रमुख स्रोत बना I शिल्प कौशलता ने आर्थिक सशक्तिकरण के नवीन आयाम स्थापित किए वर्तमान में भी आजीविका उपार्जन हेतु विषय ज्ञान के साथ कलात्मक कौशल आवश्यक है , नवीन शिक्षा नीति 2020 में भी कलात्मक कौशल का अत्यधिक महत्व है , समग्र शिक्षा के माध्यम से छात्रों के सर्वांगीण विकास हेतु कला संस्कृति एवं रचनात्मकता को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग बनाने पर बल दिया गया है |

कृषि तथा पशुपालन से अनाज , दलहन , तिलहन , मसालों एवं डेयरी उत्पादों के उत्पादन में वृद्धि हुई , शिल्प कला के माध्यम से मृदभांड निर्माण , वस्त्रों की बुनाई , धातुकर्म आदि का विकास हुआ जिसके फलस्वरूप व्यापार तथा वाणिज्य का उद्भव हुआ I मानव पारस्परिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वस्तुओं का लेनदेन करने लगे कालांतर में मुद्रा के प्रचलन से व्यापार सुगम हुआ I सिन्धुसभ्यता के मेसोपोटामिया एवं मध्य एशिया से जबकि मौर्य साम्राज्य के रोमन साम्राज्य , मिश्र तथा चीन से व्यापार के साक्ष्य मिलते हैं I भारत सूती वस्त्र , हाथी दांत तथा मसालों का प्रमुख निर्यातक था व्यापारिक मार्गों हेतु सड़कों का निर्माण , बंदरगाहों एवं समुद्री मार्गों का प्रयोग किया जाने लगा I व्यापार में उन्नति से आर्थिक विकास हुआ मानव जीवन समृद्ध होने के साथ साथ नगरीकरण को प्रोत्साहन मिला I

1990 की L.P.G. नीति ने भारतीय बाजारों में विदेशी वस्तुओं की उपलब्धता में वृद्धि की , विदेशी निवेश के नियमों को सरल कर नवीन तकनीक तथा पूंजी के प्रवाह को प्रोत्साहित किया जिससे भारतीय उद्योगों की प्रतिस्पर्धात्मकता में सुधार हुआ I वर्तमान में भारतीय अर्थव्यवस्था तीव्रता से बढ़ी , जो विश्व की पांचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था है |

अतः वर्तमान में विकसित रूप में कृषि शिल्प तथा कलाएं ऋषभदेव द्वारा प्रतिपादित शिक्षाओं के क्रमिक विकास का परिणाम है I उन्होंने मानव जाति को सार्थक एवं आध्यात्मिक जीवन यापन करने की प्रेरणास्वरूप कर्म सिद्धांत प्रतिपादित किया जिसके अनुसार मनुष्य के भविष्य का निर्धारण कर्मों के आधार पर होता है I उनकी शिक्षाओं का अंतिम उद्देश्य आत्मा को शुद्ध कर जीवन - मरण के चक्र को समाप्त कर सिद्धत्व (मोक्ष) प्राप्त करना है |

इस प्रकार राजा ऋषभदेव ने युग परिवर्तन कर कर्मभूमि के प्रारंभ में विभिन्न शिक्षाओं के माध्यम से भोगभूमिज प्रजा को कर्म में दक्ष किया | अतः तीर्थंकर ऋषभदेव तीर्थ प्रवर्तक होने के साथ - साथ युग प्रवर्तक भी है।

72 *कलाएँ*

लेख कला	आर्याछन्द कला	दंड लक्षण	प्रतिव्यूह कला
रूप कला	प्रहेलिका कला	असि लक्षण कला	स्कन्धोवा-निवेशन कला
गणित विद्या	मागधिका कला	मणि लक्षण कला	नगर-निवेशन कला
नाट्य कला	गाथा कला	काकिणी-लक्षण कला	स्कन्धावार-मान कला
गीत कला	श्लोककला	चर्म-लक्षण कला	नगर-मान कला
वादित्र कला	गंध युक्तिकला	चंद्र चरित कला	वास्तु मान कला
पुष्करगत कला	मधु सिक्थ कला	सूर्य चरित कला	वास्तु-निवेशन कला
स्वरगत कला	आभरण-विधि कला	राहु चरित कला	इष्वस्त्र कला
समताल कला	तरुणी-परिकर्म कला	ग्रह चरित कला	व्यरूप्रवाद कला
धूत कला	स्त्री लक्षण कला	सौभाग्यकर कला	अश्व शिक्षण कला
जनवाद कला	पुरुष लक्षण कला	दौर्भाग्यकर कला	हस्ति कला
प्रोक्षत्व कला	हय लक्षण कला	विधागत कला	हिरण्य, सुवर्ण, मणि पाक कला
अर्थ पद कला	गज लक्षण कला	मंत्रगत कला	धनुवेद कला
उदक मृत्तिका कला	गो लक्षण कला	रहस्यगत कला	आर्जि कला
अन्न विधि कला	कुक्कुट लक्षण कला	संभव कला	क्रीड़ा कला
पान-विधि कला	मेंढा लक्षण कला	चार कला	छेध कला
वस्त्र विधि कला	चक्र लक्षण कला	प्रतिचार कला	सजीव-निर्जीव कला
शयन विधि कला	छत्र लक्षण कला	व्यूह कला	शकुनरूत कला

64 *कलाएँ*

नृत्य कला	औचित्य	चित्र कला	वाद्य कला
मंत्र	तंत्र	ज्ञान	विज्ञान
दंभ	जलस्तंभ	गीतमान	तालमान
मेघवृष्टि	फ़लाकृष्टि	आराम रोपण	आकार गोपन
धर्म विचार	शकुनसार	क्रियाकल्प	संस्कृत जल्प
प्रसादनीति	धर्मनीति	वर्णिका वृद्धि	सुवर्णसिद्धि
सुरभितेलकर	लीलासंचरण	हय - गजपरीक्षण	पुरुष-स्त्री लक्षण
हेमरत्न भेद	अष्टादश लिपि परिच्छेद	तत्काल बुद्धि	वस्तु सिद्धि
काम विक्रिया	वैद्यक क्रिया	कुंभ भ्रम	सारीश्रम
अंजनयोग	चूर्णयोग	हस्तलाघव	वचन-पाटव
भोज्य विधि	वाणित्य विधि	मुखमंडन	शाली खंडन
कथाकथन	पुष्प ग्रंथन	वक्रोक्ति	काव्यशक्ति
स्फार विधि वेश	सर्व भाषा	अभिधान ज्ञान	भूषण-परिधान
भृत्योपचार	गृहाचार	व्याकरण	पर निराकरण
रंधन	केश बंधन	वीणानाद	वितण्डाबाद
अंक विचा	लोक व्यवहार	अन्त्साक्षरिका	प्रश्न प्रहेलिका

उपसंहार **:-**

प्रस्तुत शोध पत्र का लक्ष्य भोग भूमि से कर्म मार्ग की ओर अग्रसर होने का जैन आगमों में निर्दिष्ट वृतान्त ही नहीं है, अपितु सम्पूर्ण सृष्टि के मानवों को दिशा निर्देश देने का भी प्रधान उद्देश्य है।

जैन धर्मानुसार ऋषभदेव ने भोगभूमि से कर्मभूमि में युग परिवर्तन के दौरान समाज को सभ्य बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया। उन्होंने विभिन्न शिक्षाओं के माध्यम से भोग भूमिज प्रजा को कर्मठ बनाकर उनकी जीवन शैली एवं तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था को विलासिता से कर्मनिष्ठता के मार्ग पर अग्रसर किया। प्रजा को कृषि, वाणिज्य एवं शिल्प के माध्यम से आजीविका उपार्जन करना सिखाकर आत्मनिर्भरता का मार्ग प्रशस्त किया ।

सन्दर्भ संकेत:

1. आदिपुराण :- आचार्य जिनसेन द्वितीय पृष्ट संख्या 137
2. वही पृष्ट संख्या 138
3. काल चक्र :- डाॅ संजीव गोधा पृष्ट संख्या 21
4. वही पृष्ट संख्या 22
5. वही पृष्ट संख्या 26
6. तत्वार्थ सूत्र :- आचार्य उमस्वामी तृतीय अध्याय सूत्र संख्या 27
7. वही सूत्र संख्या 37
8. आदिपुरण :- आचार्य जिनसेन द्वितीय पृष्ट संख्या 139
9. वही पृष्ट संख्या 140
10. काल चक्र :- डाॅ संजीव गोधा पृष्ट संख्या 28
11. वही पृष्ट संख्या 29
12. वही पृष्ट संख्या 39
13. वही पृष्ट संख्या 41
14. वही पृष्ट संख्या 42
15. आदिपुराण सोलह्वा पर्व
16. ऋग्वेद के दसवे मंडल का पुरुष सूक्त

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

आदिपुराण - आचार्य जिनसेनद्वितीय
सम्पादक - डॉ. पन्नालाल जैन,साहित्याचार्य भारतीय ज्ञानपीठ,दिल्ली

तत्वार्थसूत्र - आचार्य उमास्वामी
वीर पुस्तक भण्डार जयपुर

तिलोयपण्णती - आचार्य यतिवृषभ
टीकाकत्री - आर्यिका विशुद्धमती
सम्पादक - डॉ.चेतन प्रकाश पाटनी

त्रिलोकसार - श्रीमन्नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती
टीकाकत्री - आर्यिका विशुद्धमती
सम्पादक - पं. रतनचंद जैन मुख्तार

पद्मपुराण भाग 3 - आचार्य रविषेण
भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली पांचवां सं.1997

लोक विभाग - श्री सिंहसूरी
सम्पादक - प्रोफेसर ए. एन.उपाध्यये, डॉ. हीरालाल जैन

सर्वार्थसिद्धी - आचार्य पूज्यपाद स्वामी
सम्पादक - सिद्धान्तचार्य पं.फूलचन्द्र शास्त्री

कालचक्र - डॉ. संजीव कुमार गोधा
श्री अखिल भारतीय दिगम्बर जैन विद्वत्परिषद ट्रस्ट 129 जादोननगर बी, स्टेशन रोड़ दुर्गापुर जयपुर

श्री विष्णु पुराण - महर्षि पराशर
गीता प्रेस गोरखपुर

ऋग्वेद - संकलनकर्ता वेदव्यास

श्रीमद भागवत पुराण - महर्षि वेदव्यास
गीता प्रेस गोरखपुर

स्कंद पुराण - महर्षि वेदव्यास
गीता प्रेस गोरखपुर

मत्स्य पुराण - महर्षि वेदव्यास
गीता प्रेस गोरखपुर